# 38

# बड़ा विश्वास और छोटा विश्वास

## ( 15:21-39 )

दृश्य अब गलील में यीशु के फरीसियों के साथ सामना करने से फिनीके में एक अन्यजाति स्त्री के साथ उस का सामना करने में बदल जाता है। अशुद्ध हाथों के औपचारिक रूप से धोने की यहूदी परम्पराओं का सामना करने के बाद यीशु को अशुद्ध लोगों से सम्बन्धित उनके निषेधों का सामना करना था। केवल अन्यजातियों को ही नहीं, बल्कि उन इलाकों को भी जहां वे रहते थे, अशुद्ध माना जाता था।

शुद्धता की चर्चा के तुरन्त बाद अन्यजाति स्त्री से यीशु के सामने के स्थान से सुझाव मिल सकता है कि अन्तत: अन्यजातियों ने इस्राएल से अलग नहीं रहना था (देखें प्रेरितों 10:15, 28; 11:9-18)।[1] यह विवरण परमेश्वर के चुने हुए लोगों, यहां तक कि यीशु के चेलों के कमज़ोर विश्वास के मुकाबले कुछ अन्यजातियों के बड़े विश्वास के बीच व्यंग्यपूर्ण असमानता को दिखाता है।

आलोचकों ने प्रभु पर अपने पास आने वाली अन्यजाति महिला के प्रति निर्मोही, निश्चिंत और कट्टर होने का आरोप लगाया है। आखिर सुसमाचार के विवरणों में यीशु को आमतौर पर परेशान और दुखी लोगों के प्रति करुणा से भरे दिखाया जाता है। परन्तु यह समझ होनी आवश्यक है कि जब भी लगे कि वह कुछ निर्दयता से काम कर रहा है, वहां जो कुछ उस ने कहा या किया उस का अच्छा कारण होता था (देखें 8:22; 10:9, 10)। वारेन डब्ल्यू. वियर्सबे ने लिखा है कि ''हमारे प्रभु ने इस स्त्री को इस प्रकार से जवाब उसके विश्वास को नष्ट करने के लिए नहीं, बल्कि उसे बढ़ाने के लिए दिया।''[2]

### कनानी स्त्री का विश्वास (15:21-28)

**[21]यीशु वहां से निकलकर, सूर और सैदा के प्रदेश की ओर चला गया। [22]उस प्रदेश से एक कनानी स्त्री निकली, और चिल्लाकर कहने लगी, ''हे प्रभु, दाऊद की सन्तान, मुझ पर दया कर। मेरी बेटी को दुष्टात्मा बहुत सता रहा है।'' [23]पर उस ने उसे कुछ उत्तर न दिया, तब उसके चेलों ने आकर उससे विनती की, ''इसे विदा कर, क्योंकि वह हमारे पीछे चिल्लाती आ रही है।'' [24]उस ने उत्तर दिया, ''इस्राएल के घराने की खोई हुई भेड़ों को छोड़ मैं किसी के पास नहीं भेजा गया।'' [25]पर वह आई, और यीशु को प्रणाम कर कहने लगी, ''हे प्रभु, मेरी सहायता कर।'' [26]उस ने उत्तर दिया ''लड़कों की रोटी लेकर कुत्तों के आगे डालना अच्छा नहीं।'' [27]उस ने कहा, ''सत्य है प्रभु, पर कुत्ते भी वह चूरचार खाते हैं, जो उन के स्वामियों की मेज से गिरते हैं।'' [28]इस पर यीशु ने उस को उत्तर दिया,**

**''हे स्त्री तेरा विश्वास बड़ा है, जैसा तू चाहती है तेरे लिए वैसा ही होगा।'' और उस की बेटी उसी घड़ी चंगी हो गई।**

**आयत 21.** मान लेते हैं कि **यीशु** गन्नेसरत से निकलकर (14:34) **सूर और सैदा के प्रदेश की ओर चला गया**। ''गया'' के लिए यूनानी शब्द (*anachōreō*) में ''आश्रय लेने'' का विचार हो सकता है। वह थोड़ी देर के लिए गलील में से जान-बूझकर गया होगा, ताकि विरोध कम हो सके (12:15 पर टिप्पणियां देखें; 14:13)। सूर और सैदा गलील के नगर थे, जो वहां पर थे जहां भूमध्य सागर के पूर्वी तट पर प्राचीन फिनीके राज्य था। फिनीके का नाम दुष्ट धर्म के लिए प्रसिद्ध था और परमेश्वर के नबियों द्वारा उनकी निंदा की जाती थी (11:21 पर टिप्पणियां देखें)।

**आयत 22.** एक घर में ठिकाना मिलने के बाद (मरकुस 7:24) यीशु के पास **उस परदेस से एक कनानी स्त्री** आई। मरकुस ने उसे अपने रोमी श्रोताओं के लिए ''सुरुफिनीकी जाति'' की बताया (मरकुस 7:26), जबकि मत्ती ने अपने यहूदी पाठकों के लिए पुराना शब्द ''कनानी'' इस्तेमाल किया। कनानियों ने सैदा को बसाया था (उत्पत्ति 10:15, 19) और फिनीके के लोग उन्हीं की सन्तान थे। यह स्त्री उन लोगों में से थी, जिन्हें यहूदियों द्वारा तुच्छ माना जाता था क्योंकि व्यवस्थाविवरण 7:1, 2 में परमेश्वर ने यहोशू को उन्हें खत्म करने का आदेश दिया था। सुझाव दिया गया है कि ''कनानी'' के लिए यूनानी भाषा का शब्द (*Chananaios*) विशेष रूप में फिनीके के संकेत के लिए यहूदियों द्वारा पहली सदी में इस्तेमाल किया जाने वाला शब्द था।[3]

यह स्त्री, जो एक मूर्तिपूजक रही हो सकती है, विनम्रतापूर्वक यीशु के पास आई, जो एक यहूदी गुरु और चंगाई देने वाला था। उसे उस की बड़ी आवश्यकता थी, क्योंकि उस की **बेटी को दुष्टात्मा बहुत सता रहा** था। वह स्त्री यीशु के पास आकर ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाने लगी, परन्तु आदरपूर्वक उसे **प्रभु** कहते हुए और मसीहा का पद **दाऊद की संतान** इस्तेमाल करते हुए (देखें 1:1; 9:27; 12:23; 20:30, 31; 21:9, 15; 22:42)। उस की मूर्तिपूजक पृष्ठभूमि पर ध्यान दें तो उसके शब्द हैरान करने वाले लगते हैं, परन्तु उनसे यहूदियों की मसीहा से जुड़ी आशाओं के साथ-साथ अन्यजातियों में यीशु की प्रसिद्धि, विशेषकर सीरिया के इलाके में प्रसिद्धि का पता चलता है (देखें 4:24, 25)।

**आयत 23.** पहले लगता है कि यीशु ने इस स्त्री को नज़रअन्दाज कर दिया क्योंकि **उस ने उसे कुछ उत्तर न दिया**। इस माता ने उस की खामोशी को उसे पीछे हटाने का कारण नहीं बनने दिया। उसे कुछ ऐसा चाहिए था, जिसे वह जानती थी कि केवल वही दे सकता है।

**चेलों** की इच्छा थी कि यीशु इसे **विदा कर** दे, परन्तु उस ने हिम्मत नहीं हारी। उसे पहले तो नज़रअन्दाज कर दिया गया और फिर ठुकरा दिया गया था। उस की बातों से पता चलता है कि वह चेलों द्वारा उसे भगाने की कोशिश करने के बावजूद चिल्लाती जा रही थी।

**आयत 24.** अन्त में यीशु ने उसे यह कहते हुए उत्तर दिया, **''इस्राएल के घराने की खोई हुई भेड़ों को छोड़ मैं किसी के पास नहीं भेजा गया**।'' आयत 23 में उस की खामोशी और आयत 24 में उसके शब्द दोनों ही उस स्त्री के विश्वास को बढ़ाने के इरादे से थे (देखें यूहन्ना 2:3, 4; 6:5, 6)।

यीशु चाहे सूर और सैदा के अन्यजाति परदेस में गया था पर अभी भी उस का मिशन परमेश्वर के लोगों अर्थात इस्राएल पर केन्द्रित था। यहूदी लोगों के प्रति मसीह का समर्पण चुनी हुई जाति के लिए परमेश्वर की प्रतिज्ञाओं को पूरा करने में उस की भागीदारी को दिखाता है।[4] मत्ती में पहले यीशु ने इस्राएल के लोगों पर तरस किया था, जिन्हें उस ने ''उन भेड़ों के समान, जिनका कोई रखवाला न हो, व्याकुल और भटके हुए'' बताया था (9:36)। लिमिटेड कमीशन पर बारह चेलों को भेजते हुए यीशु ने उनसे कहा था कि अन्यजातियों के नगरों या सामरियों के पास न जाना। उन्हें ''इस्राएल के घराने ही की खोई हुई भेड़ों'' में प्रचार करना था (10:5, 6)। बेशक यह सच है कि यीशु को खास तौर पर इस्राएल के पास भेजा गया था, पर कई बार उस ने अन्यजातियों और सामरियों में (8:5-13; यूहन्ना 4:1-42) भी यीशु की सेवकाई में इस्राएल के साथ दिखाई गई। इस्राएल के साथ परमेश्वर की वफ़ादारी अन्यजातियों के लिए भी आशिषों का कारण बननी थी (रोमियों 15:8-12)।

**आयत 25.** यीशु के शब्दों के बावजूद वह स्त्री **आई, और यीशु को प्रणाम कर कहने लगी, ''हे प्रभु, मेरी सहायता कर**।'' ''प्रणाम'' के लिए शब्द (*proskuneō*) दीनता के कार्य का संकेत देता है, और लगभग सभी मामलों में इसका अर्थ आराधना करना है। ''प्रभु'' (*kurios*) शब्द का इस्तेमाल मानवीय और ईश्वरीय दोनों स्वामियों को सम्बोधित करने के लिए किया जाता है। यह तय करना हमेशा आसान नहीं होता कि संक्षेप में इस शब्द का क्या अर्थ है। तौभी यह स्पष्ट है कि यह परेशान मां इस बात को समझते हुए कि यीशु में उस की सहायता करने की सामर्थ है, विनम्रतापूर्वक, आदरपूर्वक और भक्तिपूर्वक उसके पास आई।

इस स्त्री का ढीठ होना सचमुच हैरान करने वाला है। उस ने उस आशीष को पाने के लिए जो उसे प्रभु से चाहिए थी, किसी भी बात को आड़े नहीं आने देना था। वह इस बात को समझती थी कि यदि वह यीशु के पास से चली गई, तो उसके पास जाने का और कोई ठिकाना नहीं था (देखें यूहन्ना 6:66-69)।

**आयत 26.** उसके विश्वास की परीक्षा को जारी रखते हुए यीशु ने उत्तर दिया, **''लड़कों की रोटी लेकर कुत्तों के आगे डालना अच्छा नहीं**।'' ''रोटी'' (*artos*) का विषय पूरे अध्याय 15 में मिलता है। यीशु के साथ फरीसियों का झगड़ा उसके चेलों के औपचारिक रूप में न धोए गए हाथों से खाने के इर्द-गिर्द केन्द्रित था। इन चेलों को भी अन्यजातियों के साथ सम्पर्क में आने से अशुद्ध माना गया हो सकता है (15:2)। यहां पर यीशु ने कहा कि लड़कों (यहूदियों) की रोटी लेकर कुत्तों (अन्यजातियों) को नहीं डाली जानी चाहिए (15:26)। अध्याय के अन्त में यीशु ने उन चार हज़ार को खिलाने के लिए जो सम्भवतया अन्यजाति ही थे, चेलों की रोटी इस्तेमाल की थी (15:33, 34, 36)।

आयत 26 में यीशु की बात मसीहा के उसके स्वभाव से बाहरी और उस स्त्री के लिए ठोकर खिलाने वाली मानी गई है। इस आयत की व्याख्या करते हुए, कम से कम तीन मुद्दों पर विचार किया जाना आवश्यक है। पहला, यीशु उस स्त्री की परीक्षा कर रहा था, जिसके लिए कई बार कुछ दृढ़ता की आवश्यकता होती है। दूसरा, वचन न तो उस टोन को बताता है, जिसमें यीशु ने बात की और न उसके चेहरे के हाव-भाव हैं, जो कि संवाद के दो महत्वपूर्ण पहलू हैं। विलियम बार्कले ने कहा है, ''जिस टोन और हाव-भाव से कोई बात कही जाती है, उससे

बड़ा फर्क पड़ता है। कई बार कठिन लगने वाली बात भी चेहरे पर मुस्कुराहट के साथ कही जा सकती है।''[5] तीसरा, ''कुत्ता'' के लिए यूनानी शब्द (*kunarion*) का अर्थ ''घरेलू कुत्ता या पालतू कुत्ता'' हो सकता है।[6] यह *kuōn* का लघु रूप लगता है, जो गलियों में घूमने वाले कुत्ते के लिए इस्तेमाल होने वाला शब्द है। निश्चय ही पालतू कुत्ते की आवारा कुत्ते से तुलना करने के समान ठोकर खिलाने वाला नहीं होना था।

यहूदी लोग अपमानजनक अर्थ में अन्यजातियों को ''कुत्ते'' कहते थे (7:6 पर टिप्पणियां देखें)। अन्यजातियां खाने के यहूदी नियमों को नहीं मानती थीं; वे जो मन चाहे खा लेते थे। इसलिए वे कूड़ा और सड़ा मांस खाने वाले गलियों में घूमने वाले गंदे, खूंखार कुत्तों जैसे थे। इसके अलावा अन्यजाति अपनी शारीरिक अनैतिकता के कारण बेकाबू कुत्तों जैसे थे। आमतौर पर यहूदी लोग अन्यजातियों को निचले स्तर पर देखते थे, क्योंकि वे परमेश्वर की वाचा के लोग नहीं थे।

**आयत 27.** ठोकर लगने के उलट हाजिर जवाब महिला ने इस रूपक को अपने ही लाभ के लिए बदल लिया। यीशु द्वारा इस्तेमाल किए गए ''कुत्ता'' के लिए शब्द (*kunarion*) को दोहराते हुए उस ने उत्तर दिया, ''**सत्य है प्रभु, पर कुत्ते भी वह चूरचार खाते हैं, जो उन के स्वामियों की मेज से गिरते हैं**।'' एक अनुवाद को इस तरह से पढ़ा जा सकता है, ''हम अन्यजाति चाहे यहूदियों के साथ मेज पर बैठकर उनकी रोटी नहीं खा सकते, पर मेज के नीचे गिरे चूर-चार तो खा सकते हैं।''

इस प्रेमी माता का मानना था कि यीशु में इतनी सामर्थ है कि उस की बेटी की चंगाई से किसी भी प्रकार उसके अपने लोगों में सेवा करने की क्षमता कम नहीं होगी। पहले उस ने यीशु को ''दाऊद की संतान'' अर्थात इस्राएल के मसीहा के रूप में पहचाना था (15:22)। यहां पर उसके उत्तर से संकेत मिलता है कि वह कह रही थी कि वह सब जातियों का भी प्रभु था। वास्तव में अब्राहम से की गई परमेश्वर की प्रतिज्ञाओं में उसके वंश अर्थात मसीह के द्वारा सब जातियों को आशीष देने की बात थी (उत्पत्ति 12:3; 22:18; 26:4; गलातियों 3:6-18)।

**आयत 28.** ईश्वरीय योजना में उस स्त्री द्वारा इस्राएल की प्राथमिकता को मान लेने के बाद यीशु उस की सहायता करने को तैयार था। उस स्त्री का उत्तर चाहे वही हो जो वह उससे चाहता था, पर प्रभु अभी भी उसके उत्तर से प्रभावित था। उस ने कहा, ''**हे स्त्री तेरा विश्वास बड़ा है**।'' ''स्त्री'' शब्द सम्बोधन के लिए उबाऊ या कठोर शब्द नहीं है। यीशु की अपनी माता के साथ होने वाली बातचीत सहित (यूहन्ना 2:4; 19:26) नये नियम में इसका इस्तेमाल और भी कहीं हुआ है (लूका 13:12; 22:57; यूहन्ना 4:21; 8:10; 20:13, 15)।

उस स्त्री ने ज़िद की थी, इस कारण उसे वह आशीष मिल गई, जिसे वह चाहती थी। यीशु ने ''बड़ा'' विश्वास होने के लिए उस की तारीफ़ की। किसी के विश्वास के लिए उस ने केवल दो बार उस की तारीफ़ की और दोनों ही मामलों में जिनकी तारीफ़ की गई, वे दोनों ही अन्यजाति थे। एक तो रोमी सूबेदार था, जिसके सेवक को चंगा किया गया था (8:5-13), और दूसरी यह कनानी माता थी।

यीशु को केवल इतना कहना था, ''**जैसा तू चाहती है तेरे लिए वैसा ही होगा**'' और ''**उस की बेटी उसी घड़ी चंगी हो गई**।'' सूबेदार के सेवक की तरह इस लड़की को चंगा

करने के लिए उसे वहां जाने की आवश्यकता नहीं पड़ी। उसके लिए उसके ऊपर हाथ रखने की आवश्यकता भी नहीं पड़ी। यह जानते हुए कि यीशु जीवन का प्रभु है, दुष्टात्माओं ने उस की आवाज़ सुनकर उस की बात मान ली।

## अन्यजातियों के बीच स्वीकार किया जाना (15:29-39)

**यीशु का भीड़ को चंगा करना ( 15:29-31 )**

**[29]यीशु वहां से गलील की झील के पास आया, और पहाड़ पर चढ़ कर बैठ गया। [30]तब भीड़ पर भीड़ उसके पास आई। वह अपने साथ लंगड़ों, अंधों, गूंगों, टुंडों और बहुत औरों को लेकर उस के पास आई, और उन्हें उस के पावों पर डाल दिया। उस ने उन्हें चंगा किया। [31]जब लोगों ने देखा कि गूंगे बोलते, और टुंडे चंगे होते, और लंगड़े चलते, और अंधे देखते हैं तो अचम्भा करके इस्राएल के परमेश्वर की बड़ाई की।**

**आयत 29.** मत्ती हमारे लिए लिखता है कि **यीशु** उस इलाके में से निकलकर **गलील की झील के पास आया**। मरकुस और स्पष्टता से कहता है कि ''वह सूर और सैदा के देशों से निकलकर दिकापुलिस देश से होता हुआ गलील की झील पर पहुंचा'' (मरकुस 7:31)। दिकापुलिस दस नगरों वाला एक महासंघ था, जिसमें अधिकतर आबादी अन्यजातियों की थी (4:25 पर टिप्पणियां देखें)। वहां, झील के पूर्वी ओर, यीशु **पहाड़ पर** (*oros*) या पहाड़ी पर गया। यह तथ्य कि वह **वहां बैठ गया** इस बात का संकेत देता है कि वह सिखाने को तैयार था (5:1, 2 पर टिप्पणियां देखें)। बेशक ''तीन दिन'' वहां रहने के कारण यीशु ने लोगों को शिक्षा दी (15:32)। परन्तु अगली आयतों में ज़ोर चंगाई पर है।

**आयत 30.** इस अवसर पर मरकुस का विवरण बताता है कि यीशु ने एक आदमी को चंगा किया ''जो बहिरा था और हकलाता भी था'' (मरकुस 7:32-37)। उस चंगाई के समय यीशु उसे भीड़ से जो वहां इकट्ठा हुई थी एक ओर ले गया। चाहे यीशु ने उसे किसी को न बताने के लिए कहा था पर इस व्यक्ति के मित्रों या परिवार ने तुरन्त इस बात को फैला दिया। प्रभु के वहां होने की बात बड़ी तेज़ी से फैल गई होगी, क्योंकि भांति-भांति के रोगों और बीमारियों से दुखी लोगों को लाते हुए **भीड़ पर भीड़ उसके पास आई**। उनमें से कुछ लोग **लंगड़े, अंधे, गूंगे, या टुंडे** थे। **बहुत औरों** को और तरह की समस्याएं थीं। मित्रगणों और परिवार के लोगों ने **उन्हें उसके पांवों पर डाल दिया**। उनकी आवश्यकताओं के अनुसार, यीशु ने करुणापूर्वक **उन्हें चंगा किया** (देखें 4:23-25; 9:35; 11:5; 12:15)।

**आयत 31.** लोगों ने जब देखा कि **गूंगे बोलते, और टुंडे चंगे होते, और लंगड़े चलते, और अंधे देखते हैं** तो उन्होंने **अचम्भा** किया। वे मसीह की सामर्थ के भय में खड़े हो गए। उन्होंने इसे आश्चर्यकर्म के रूप में माना और उन्होंने **इस्राएल के परमेश्वर की बड़ाई की**। ''इस्राएल के परमेश्वर'' अभिव्यक्ति में उस इलाके की अन्यजाति जनसंख्या भी हो सकती है। यदि केवल यहूदी लोगों की ही सहायता की गई होती तो वचन कुछ इस प्रकार से पढ़ा जाता,

''उन्होंने परमेश्वर को बड़ाई दी।'' इन अन्यजातियों की सकारात्मक प्रतिक्रिया यीशु के अपने लोगों में से कुछ, विशेषकर यहूदी अगुओं की नकारात्मक प्रतिक्रिया से बिल्कुल उलट है (11:20-24; 12:14, 24, 38)।

**यीशु द्वारा चार हज़ार को खिलाना ( 15:32-39 )**

**[32]यीशु ने अपने चेलों को बुलाकर कहा, ''मुझे इस भीड़ पर तरस आता है, क्योंकि वे तीन दिन से मेरे साथ हैं और उन के पास कुछ खाने को नहीं है। मैं उन्हें भूखा विदा करना नहीं चाहता, कहीं ऐसा न हो कि मार्ग में थक कर रह जाएं।'' [33]चेलों ने उस से कहा, ''हमें इस जंगल में कहां से इतनी रोटियां मिलेंगी कि हम इतनी बड़ी भीड़ को तृप्त करें?'' [34]यीशु ने उन से पूछा, ''तुम्हारे पास कितनी रोटियां हैं?'' उन्होंने कहा, ''सात और थोड़ी सी मछलियां।'' [35]तब उस ने लोगों को भूमि पर बैठने की आज्ञा दी। [36]और उन सात रोटियों और मछलियों को लिया, धन्यवाद करके तोड़ा, और अपने चेलों को देता गया, और चेले लोगों को। [37]इस प्रकार सब खाकर तृप्त हो गए और बचे हुए टुकड़ों से भरे हुए सात टोकरे उठाए। [38]खाने वाले, स्त्रियों और बालकों को छोड़, चार हजार पुरुष थे।**

**[39]तब वह भीड़ को विदा करके नाव पर चढ़ गया, और मगदन देश की सीमा में आया।**

चार हज़ार को खिलाने और पांच हज़ार को खिलाने के बीच समानताएं मिलती हैं। दोनों घटनाओं में लोगों की एक बड़ी भीड़ निर्जन स्थान में इकट्ठा हुई थी, परन्तु उनके पास खाने के लिए कुछ भी नहीं था। उन पर तरस खाते हुए यीशु ने भीड़ को कतारों में बिठा दिया था। रोटी के कुछ टुकड़े और कुछ मछलियां लेकर उस ने परमेश्वर को धन्यवाद दिया और तब तक उनमें बांटता रहा, जब तक वे सब तृप्त नहीं हो गए। इसके बाद बहुत से बचे हुए टुकड़ों को इकट्ठा किया गया था।

जैसा पहले देखा गया है, चार हज़ार को खिलाना पिछले आश्चर्यकर्म को फिर से बताना नहीं है; दोनों ही घटनाएं कई पहलुओं से एक-दूसरे से अलग हैं (इस पुस्तक में पहले आए पाठ ''पांच हज़ार को खिलाना'' में देखें)। दोनों को एक ही कहानी के रूप में मानने के विरुद्ध सबसे विश्वासयोग्य तर्क यह है कि मत्ती और मरकुस दोनों में ही दो अलग-अलग विवरण हैं। उन्होंने एक ही कहानी को दो बार नहीं बताना था, विशेषकर अलग-अलग विवरणों के साथ। पवित्र आत्मा की अगुआई ने ऐसी गलती होने से उन्हें रोक देना था (2 पतरस 1:20, 21)। एक और विश्वास किए जाने योग्य तर्क यह है कि दोनों आश्चर्यकर्मों की बात यीशु ने स्वयं विस्तार से की (16:5-12)।

इन दोनों आश्चर्यकर्मों में महत्वपूर्ण अन्तर अलग-अलग लोगों का है। पांच हज़ार को खिलाने में, गलील से यहूदी निर्जन स्थान में यीशु के पीछे आए थे (14:13-15)। चार हज़ार को खिलाने में, अधिकतर अन्यजाति ही थे, जो दिकापुलिस के आस-पास के इलाकों से इकट्ठा हुए थे (मरकुस 7:31)। मत्ती 15 पूरे अध्याय के साथ अन्यजातियों का विषय मेल खाता है: जिसमें रोटी खाने और रस्मी शुद्धता पर यहूदियों की बहस (15:1-20) यीशु के रोटी के रूपक

पर अन्यजाति स्त्री की बेटी की चंगाई में बदल जाती है (15:21-28)। इसका चरम अन्यजाति लोगों की भीड़ को यीशु की चंगाई और उनके लिए आश्चर्यकर्म से रोटी का उपाय करने में चरम पर आता है (15:29-39)।

**आयत 32. यीशु ने अपने चेलों को बुलाकर** भीड़ पर तरस खाने की बात बताई। ऐसा करके वह उन्हें तरसवान होना ही सिखाने (9:36; 14:14; 20:34) के साथ उनके विश्वास को परख रहा था (15:33)।

लोग **तीन दिन** से यीशु के साथ थे और **उनके पास कुछ खाने को नहीं** था। तीन दिन का समय पिछली आयतों की घटनाओं को पहले से मान लेता है, जब यीशु ने उनके बीमारों को चंगा किया (15:29-31)। यह नहीं मान लिया जाना चाहिए कि लोगों ने इस पूरे समय के लिए उपवास रखा था। वे अपने साथ कुछ खाना अवश्य लाए होंगे, परन्तु तीन दिनों के बाद वह खत्म हो गया।[7] यीशु **उन्हें भूखा विदा करना नहीं चाहता** था ताकि **कहीं ऐसा न हो कि वे मार्ग में थक कर रह जाएं**। कुछ लोग बहुत दूर से चलकर आए थे (मरकुस 8:3) और उनका घर काफ़ी दूर होगा। यीशु ने इस अवसर पर लोगों की आवश्यकता की ओर ध्यान दिलाया, जबकि पांच हज़ार को खिलाने के समय चेलों ने इस बात की ओर ध्यान दिलाया (14:15)।

**आयत 33. चेलों** की भीड़ के लिए यीशु की चिन्ता से न तो असहमति और न ही लोगों को बिना खाए घर भेजने देने में खतरे पर कोई विवाद था। परन्तु वे तर्क की बातों से उलझन में थे कि ''**हमें इस जंगल में कहां से इतनी रोटियां मिलेंगी कि हम इतनी बड़ी भीड़ को तृप्त करें**?'' वे एक निर्जन स्थान में थे इसलिए कोई बाजार भी पास में नहीं था, जहां से इतनी रोटियां खरीदी जा सकतीं। यह बात अविश्वसनीय लगती है कि चेलों ने उनके लिए उपाय करने की यीशु की योग्यता पर विचार न किया हो। आखिर उसे पांच हज़ार को खिलाते, देखे उन्हें अधिक देर नहीं हुई थी (देखें 16:8-10)।

**आयत 34.** प्रभु ने उनके पास भोजन का पता लगाया कि कितना है। प्रेरित केवल **सात** छोटी **रोटियां** और **थोड़ी सी मछलियां** ही ढूंढ़ पाए। खिलाने के दोनों आश्चर्यकर्मों में एक और भिन्नता खाने की मूल गिनती की है। पांच हज़ार को खिलाने में, चेलों ने *पांच* रोटियां और *दो* मछलियां ढूंढ़ी थीं (14:17) जबकि इस आश्चर्यकर्म में उनके पास *सात* रोटियां और *थोड़ी सी* मछलियां थीं।

**आयत 35.** पांच हज़ार को खिलाने की तरह ही यीशु ने लोगों को **भूमि पर बैठने की** आज्ञा दी। ''आज्ञा दी'' के लिए यूनानी शब्द (*parangellō*) का अनुवाद ''आदेश दिया'' (NASB) या ''हुकम दिया'' (NRSV) ही हुआ है; ये शब्द किसी के अधिकार पर ज़ोर देता है। ''बैठने'' (*anapiptō*) का अर्थ ''चौकड़ी'' मारना है जो भोजन के लिए बैठने की सामान्य स्थिति है। पांच हज़ार को खिलाने में, लोगों से ''घास पर'' बैठने को कहा गया था (14:19)। इस अवसर पर लोगों को ''भूमि पर'' बैठने की आज्ञा दी गई थी। पहला खिलाना फसह के समय के निकट (यूहन्ना 6:4) और शायद यीशु के सूर और सैदा के प्रदेश में से जाने के कुछ महीने बाद हुआ था (15:21)। यहां लोगों के भूमि पर बैठने की बात ''गर्मियों के मौसम के अन्त का सुझाव देती है, जबकि घास सूख गया होगा।''[8]

**आयत 36.** पहले की तरह ही यीशु ने पहले **रोटियों** और **मछलियों** के लिए परमेश्वर को

धन्यवाद दिया। इस आयत में **धन्यवाद करके** (*eucharisteō*) पहले विवरण के ''धन्यवाद किया'' (*eulogeō*) के लिए शब्द से भिन्न है। तौभी इनके अर्थ एक ही हैं (14:19 पर टिप्पणियां देखें)। रोटियों और मछलियों पर प्रार्थना करने के बाद **उस ने उनको तोड़ा** और **चेलों** को **लोगों को** भोजन बांटने के लिए कहा।

**आयत 37.** एक बार फिर यीशु ने भोजन बहुतायत से दिया, क्योंकि **सब खाकर तृप्त हो गए**। पांच हज़ार लोगों के खा लेने पर टुकड़ों की बारह टोकरियां (*kophinos*) उठाई गई थीं, जबकि इस बार **सात टोकरे** (*spuris*) उठाए गए थे (14:20 पर टिप्पणियां देखें)। टोकरे चाहे कुछ ही थे पर बचे हुए टुकड़े पहली बार खिलाने से कहीं अधिक थे। यह तथ्य कि ''सात'' टोकरे उठाए गए अन्यजाति लोगों की भीड़ के लिए सम्पूर्णता का प्रतीक हो सकते हैं।

**आयत 38.** यहां पर उन लोगों की संख्या भी बताई गई है, जिन्हें खिलाया गया था: **खाने वाले, स्त्रियों और बालकों को छोड़, चार हजार पुरुष थे** (देखें 14:21)। एल्फ्रेड एडरशेम ने ध्यान दिलाया है कि प्रभु ने अपनी सेवकाई के प्रत्येक चरण का अन्त किसी न किसी प्रकार के भोजन के साथ किया। गलील की अपनी सेवकाई का समापन उस ने पांच हज़ार को खिलाने से और दिकापुलिस में अन्यजातियों में अपनी सेवकाई का समापन उस ने चार हज़ार को खिलाने के साथ किया। यहूदिया की उस की सेवकाई क्रूस पर उस की मृत्यु से पहले खत्म हो गई, जिसमें उस ने अपने चेलों को अटारी वाले कमरे में खिलाया।[9]

**आयत 39.** यीशु ने **भीड़ को** विदा किया और गलील की झील के पूर्वी किनारे से पश्चिमी किनारे की ओर पार जाने के लिए **नाव पर चढ़ गया**। वह **मगदन देश की सीमा में आया**। चेलों का उल्लेख नहीं है, चाहे बेशक वे उसके साथ ही थे। मत्ती ने केवल यीशु का संकेत दिया है क्योंकि वह उसके ध्यान का केन्द्र था।

आज सही-सही पता नहीं है कि मगदन कहां था। पवित्र शास्त्र में इस इलाके का दोबारा उल्लेख नहीं है और इसकी पहचान को बताने वाली कोई ऐतिहासिक जानकारी भी पता नहीं चली है। यह तर्क दिया गया है कि यह ''मगदला'' को ही कहा जाता था, जिससे मरियम मगदलीनी को उस का नाम मिला था। बाद की कई प्राचीन हस्तलिपियों में आयत 39 में ''मगदला'' ही है।

मगदन की जगह मरकुस ने कहा कि यीशु और उसके चेले ''दलमनुता प्रदेश को'' गए (मरकुस 8:10)। जबकि इस स्थान का पता तो नहीं है पर सम्भवतया यह झील के पश्चिमी तट पर गन्नेसरत के मैदान के निकट था। यह स्थान इस बात की व्याख्या कर देगा कि बाद में यीशु को बैतसेदा से होकर फिर उत्तर की ओर कैसरिया फिलिप्पी में जाकर (मरकुस 8:13, 22, 27) गलील की झील फिर से पार क्यों करनी पड़ी थी।

मत्ती और मरकुस में स्थानों के लिए दिए गए नामों में अन्तर इस विवरण की प्रामाणिकता पर सवाल उठाने वाला नहीं होना चाहिए। नये नियम के कई स्थानों के, विशेषकर छोटे-छोटे स्थानों के एक से अधिक नाम हैं।[10] यदि मगदन और दलमनुता एक ही स्थान के अलग-अलग नाम थे तो ये नाम उन स्थानों के होंगे, जो एक-दूसरे के निकट थे।

❖❖❖❖❖ सबक ❖❖❖❖❖

## इस्राएल की खोई हुई भेडें (15:24)

यीशु को इस्राएल के घराने की खोई हुई भेड़ों में भेजा गया था (15:24)। जब उस ने लिमिटेड कमीशन देकर प्रेरितों को भेजा तो उस ने केवल ''इस्राएल के घराने ही की खोई भेड़ों के पास'' भेजा (10:6)। इसे बात ने उसे अवसर आने पर अन्यजातियों में सेवकाई करने से रोका नहीं (15:21-28)। यीशु ने अपने प्रेरितों को बताया कि उस की ''और भी भेड़ें'' थीं, जो शारीरिक इस्राएल की नहीं थीं। उस ने कहा, ''वे मेरा शब्द सुनेंगी; तब एक ही झुण्ड और एक ही चरवाहा होगा'' (यूहन्ना 10:16)। आज कुछ लोग यह बात सिखा रहे हैं कि ये ''और ही भेड़ें'' अलग-अलग प्रकार की साम्प्रदायिक कलीसियाओं के लोगों की तरह हैं। यह सच नहीं हो सकता। यह वचन अन्यजातियों के लिए कहा गया है। परमेश्वर की योजना यहूदियों और अन्यजातियों अर्थात सब लोगों को ''एक देह'' में छुड़ाना था जो कि कलीसिया है (इफिसियों 2:11-16)।

## विश्वास (15:28)

क्या बाइबल यह बताती है कि हमारा उद्धार केवल विश्वास के द्वारा होता है? नहीं। वास्तव में यह इसके उलट सिखाती है (याकूब 2:24)। हमारा उद्धार ''विश्वास के द्वारा अनुग्रह ही से'' होता है (इफिसियों 2:8, 9)। अनुग्रह हमारे उद्धार के लिए परमेश्वर का योगदान है और विश्वास से आज्ञापालन हमारा योगदान है। हमें विश्वास के महत्व को कभी कम नहीं करना चाहिए। विश्वास हमारे मनों को शुद्ध करता है (प्रेरितों 15:9), हमारे पापों को क्षमा करता है (प्रेरितों 10:43), हमें धर्मी ठहराता है (रोमियों 5:1), हमें उद्धार देता है (1 पतरस 1:9) और हमें पवित्र करता है (प्रेरितों 26:18)। हमारा विश्वास संसार पर जय पाता है (1 यूहन्ना 5:4) और विश्वास से हमें अनन्त जीवन मिला है (1 यूहन्ना 5:11-13)। विश्वास हमारा उद्धार कैसे करता है? हमारा उद्धार कर्मों से नहीं, बल्कि विश्वास से होता है, जो कार्य करता है (गलातियों 5:6; इब्रानियों 11)।

परमेश्वर का वचन विश्वास के अलग-अलग दर्जों का वर्णन करता है। बड़ा विश्वास होता है (15:28) परन्तु कम विश्वास भी होता है (14:31)। मज़बूत विश्वास है (रोमियों 4:20), परन्तु कमज़ोर विश्वास भी है (मरकुस 9:24)। हम पूरे विश्वास (प्रेरितों 11:24), दृढ़ विश्वास (कुलुस्सियों 2:5), बड़ा हुआ विश्वास (लूका 17:5), बढ़ता हुआ विश्वास (2 थिस्सलुनीकियों 1:3) और विश्वास का वह दर्जा जो किसी काम का नहीं है, जिसे ''मुर्दा विश्वास'' कहा जा सकता है (याकूब 2:26) की बात करते हैं। मरा हुआ विश्वास उद्धार नहीं करेगा। उद्धार के लिए जीवित, सक्रिय और कार्य करने वाला विश्वास होना आवश्यक है।

टिप्पणियां

[1]क्रेग एस. कीनर, *ए कमैंट्री ऑन द गॉस्पल ऑफ़ मैथ्यू* (ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: विलियम बी. ईर्डमैंस पब्लिशिंग कं., 1999), 414. [2]वारेन डब्ल्यू. वियर्सबे, *बी लॉयल* (व्हीटन, इलिनोइस: विक्टर बुक्स, एसपी पब्लिकेशंस, 1980), 103. [3]देखें डेविड हिल, *द गॉस्पल ऑफ़ मैथ्यू,* द न्यू सेंचुरी बाइबल कमैंट्री (ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: विलियम बी. ईर्डमैंस पब्लिशिंग कं., 1972), 253; लियोन मौरिस, *द गॉस्पल अकॉर्डिंग टू मैथ्यू,* पिल्लर कमैंट्री (ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: विलियम बी. ईर्डमैंस पब्लिशिंग कं., 1992), 401, एन 48; और डब्ल्यू. एफ. अल्ब्राइट एंड सी. एस. मन, *मैथ्यू,* द एंकर बाइबल (गार्डन सिटी, न्यू यॉर्क: डबलडे एंड कं., 1971), 187. [4]डग्लस आर. ए. हेयर, *मैथ्यू,* इंटरप्रिटेशन (लुइसविल्ले: जॉन नॉक्स प्रैस, 1993), 178. [5]विलियम बार्कले, द *गॉस्पल ऑफ मैथ्यू,* अंक 2, 2रा संस्क., द डेली स्टडी बाइबल (फिलाडेल्फिया: वेस्टमिंस्टर प्रैस, 1958), 134–35. [6]वाल्टर बाउर, *ए ग्रीक-इंग्लिश लैक्सिकन ऑफ़ द न्यू टैस्टामैंट एंड अदर अर्ली क्रिश्चियन लिटरेचर,* 3रा संस्क., संशो. एंड संपा. फ्रैडरिक डब्ल्यू. डैंकर (शिकागो: यूनिवर्सिटी ऑफ़ शिकागो प्रैस, 2000), 575. [7]मौरिस, 409. [8]रॉबर्ट एच. माउंस, *मैथ्यू,* न्यू इंटरनैशनल बिब्लिकल कमैंट्री (पीबॉडी, मैसाचुएटस: हैंड्रिक्सन पब्लिशर्स, 1991), 154. [9]एलफ्रेड एडरशेम, *द लाइफ एंड टाइम ऑफ़ द मसायाह,* अपडेटेड एडिशन, (पीबॉडी, मैसाचुएट्स: हैंड्रिक्सन पब्लिशर्स, 1993), 517. [10]जेम्स बर्टन कॉफ़मैन, *कमैंट्री ऑन मैथ्यू* (आस्टिन, टैक्सस: फ़र्म फ़ाउंडेशन पब्लिशिंग हाउस, 1977), 235–36.